International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 26-05-2023, Accepted: 12-06-2023, Published: 27-06-2023
Volume 9, Issue 3, 2023, Page No. 28-30

हिंदी साहित्य में स्वाधीनता आन्दोलन

डॉ. रोहित कुमार
सहायक प्रोफेसर, हिंदी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय (केंद्रीय विश्वविद्यालय) श्रीनगर, उत्तराखंड, भारत

सारांश
इस शोध पत्र के द्वारा हिंदी साहित्य में स्वतंत्रता आन्दोलन की चेतना के उत्पन्न होने के आरंभिक दौर को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है द्य आज हम 1857 ई. की क्रांति को किसी सिपाही विद्रोह या ग़दर के स्थान पर भारत का पहला स्वाधीनता संग्राम तथा अंग्रेजों के आत्याचारों के विरोध में एक लोकयुद्ध अधिक मानते हैं द्य एक अत्याचारी व्यवस्था और संस्कृति के विरुद्ध धार्मिक प्रतीकों तथा भावनाओं का प्रयोग भारतीय जनमानस को जगाने के लिए किया गया द्य इस क्रांति में हिन्दू और मुसलमान दोनों के मध्य अविश्वसनीय एक सूत्रता दिखाई देती है जिसे आगे चल कर गाँधी जी ने आगामी आन्दोलनों के लिए एक नया आयाम दिया द्य इस क्रांति की पृष्ठभूमि में सामाजिक–सांस्कृतिक यथार्थ के साथ–साथ आर्थिक वास्तविकता भी प्रमुख कारण रही द्य यह दौर भारतीय जनमानस में अस्मिता की गहरी लड़ाई को आरंभ करता है जहाँ भारत और भारतीयता की खोज के साथ–साथ राष्ट्रवाद और पुनर्जागरण हिंदी साहित्य के प्रमुख विषय बन जाते हैं ।

मूल शब्दः 1857 क्रांति, हिंदी साहित्य, स्वाधीनता आन्दोलन, भारतेंदु युग, द्विवेदी युग

1757 में जब अंग्रेजों ने बंगाल के नवाब को प्लासी के युद्ध में हराया तभी से अंग्रेजी राज का आरम्भ माना जाता रहा है। यद्यपि कुछ इतिहासकार 1740 में आरंभ हुए आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष को भी आरंभ के रूप में देखते हैं। यह आधुनिक भारत के इतिहास में ऐसा नया समय था जब तेज़ी से विभिन्न घटनाक्रम घटित हो रहे थे और अंग्रेज भारत के क्षेत्र को कूटनीतिक संधियों और युद्धों से जीतते चले जा रहे थे। इस राजनीतिक संघर्ष में अंग्रेजों को लगभग 100 वर्षों का समय लगा और लगभग अंतिम दौर 1857 की क्रांति के आस–पास तक आते–आते अंग्रेजों के पैर भारत में गहरे जमने लगे थे द्य इस सैनिक विद्रोह ने आगे बढ़ कर पहले स्वतंत्रता संग्राम का रूप अवश्य ही धारण किया लेकिन इसे अत्यधिक निर्ममता से दबा दिया गया। ऐसा नहीं है कि इससे पूर्व भारतीय जनता का असंतोष व्यक्त नहीं हुआ। किसान, जनजातीय समूह और सैनिक आदि कई वर्गों ने अपने हितों व सम्मान हेतु अंग्रेजी राज से सीधा संघर्ष किया | इतिहास में ऐसे कई संघर्ष दर्ज हैं, जैसे– सन्यासी विद्रोह, गोरखपुर–भिवानी–अवध आदि नागरिक विद्रोह, पहाड़िया–चुआर–संथाल आदि जनजातीय आन्दोलन |

फिर भी 1857 से पहले औपनिवेशिक सत्ता से संघर्ष का जितना इतिहास मिलता है उसकी तुलना में साहित्य में मूलतः हिंदी साहित्य में लेखन बहुत कम ही दिखाई देता है | हिंदी क्षेत्र की तुलना में बांग्ला क्षेत्र अंग्रेजी शासन से पहले प्रभावित हुआ इसलिए साहित्य में स्वाधीनता आन्दोलन का आरंभिक वर्णन नागरिक विद्रोह (सन्यासी विद्रोह) से प्रभावित उपन्यास 'आनंदमठ' ('वन्देमातरम' के लेखक बंकिमचन्द्र चटोपाध्याय) में दिखाई देता है | हिंदी साहित्य के इतिहास के संबंध में यह उल्लेखनीय है कि "अंग्रेजों से अपने हित जोड़ लेने वाले सामंतों के दरबार में जो साहित्य लिखा गया, उसमें नायिकाभेद और नख–शिख वर्णन की तो भरमार है लेकिन देश की पराधीनता का कोई चिन्ह नहीं है द्य संयोग की बात नहीं है कि 1650 से 1857 तक रीतिकाल के उत्कर्ष के परवर्ती सौ वर्ष भारत की पराधीनता के प्रारंभिक सौ वर्ष भी हैं"। आलोचक अजय तिवारी भारतीय समाज में मौजूद इस संक्रमण पर संकेत करते हुए लिखते हैं कि समाज–सुधारक राजा राममोहन राय और हिंदी कवि पद्माकर की मृत्यु एक ही वर्ष 1833 में हुई लेकिन राजा राममोहन राय 'आधुनिक' संसार के मनुष्य थे और पद्माकर 'मध्यकालीन' मनोभूमि के बहुत साफ़ है कि अवध पर अंग्रेजों का प्रभाव 1856 से ही दिखाई पड़ता है इसलिए हिंदी क्षेत्र में स्वाधीनता और नवजागरण का भाव कुछ देर से ही आया |

1857 से पूर्व एक ओर जहाँ भारत में कुछ नीतियों को लेकर किसान–नागरिक–सैनिक आदि समूह अंग्रेजी राज के प्रति विद्रोह कर रहे थे और बाद में 1857 में कुछ राजतंत्र भी इसमें शामिल हुए वहीं इसके ठीक विपरीत पाश्चात्य विचारों और प्रभावों से भारतीय समाज प्रभावित भी हो रहा था। भारतीय समाज में नवजागरण और इस्लामिक शासन से मुक्ति संबंधी दोनों ही धारणाएं पनप रहीं थीं। श्रीनारायण चतुर्वेदी अपने 'आधुनिक हिंदी साहित्य का आदिकाल' ग्रंथ में लिखते हैं– "हिंदुओं को एक हज़ार वर्ष बाद पूरे नागरिक अधिकार मिले और कानून की निगाह में वे मुसलमानों के समकक्ष हो गए। इससे उनमें आत्मसम्मान की भावना उत्पन्न हुई। और साथ ही अंग्रेजों के संपर्क में आने के कारण उनका एकाकीपन और संसार से कटाव भी दूर हो गया" था। लेकिन आर्थिक दृष्टि से देखें तो यह भी सत्य है कि जहाँ इस्लामिक शासनकाल में राजस्व यहीं बना रहता था और निर्माण आदि प्रवृत्तियों के कारण धन का प्रवाह आम जनता तक पहुंच रहा था वहीं कंपनी राज में कर और अन्य लूट विदेश जा रही थी, साथ ही भारतीय कारीगरों और उद्योगों को हानि पहुंचा कर विदेशी उत्पाद के लिए बाजार तैयार किया जा रहा था द्य इस दोहरी स्थिति के बीच संक्रमण के इस दौर में भारतीयों में अंग्रेजों को लेकर मिली जुली धारणा मौजूद होना स्वाभाविक था इसलिए जब 1857 क्रांति के बाद कंपनी राज के स्थान पर ब्रिटिश राज शुरू हुआ तो भारतीयों में सुधार आने की भावना फिर बलवती होने लगी। इसी दौर में ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज आदि संस्थाएं न केवल समाज के एकीकरण पर बल दे रहीं थीं बल्कि समाज में उदार विचारों से संवर्धित भारतीय अतीत को प्रस्तुत कर रहीं थीं | भारतीय समाज में यह विकास स्पष्ट देखने को मिलता है कि "अध्यात्म को पुनर्जागरण पहले लोकसेवा से जोड़ता है और फिर लोकसेवा को क्रमशः राष्ट्रीय भावना से" । फिर भी ब्रिटिश राज के प्रति सकारात्मक विचार को ठेस पहुँचने

में कम समय लगा और भारतेंदु के आगमन के साथ ही ब्रिटिश राज के प्रति रोष साहित्य का विषय बनने लगा।

आधुनिक विचारों के अग्रदूत भारतेंदु के क्रांतिकारी विचारों का प्रभाव सबसे अधिक पत्रकारिता के क्षेत्र में देखने को मिला। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने स्वदेशी, स्वभाषा और आर्थिक आत्मनिर्भरता को साहित्य में जातीय जीवन–मूल्य की प्रतिष्ठा के रूप में विकसित किया। उनके साहित्य में भारतीय समाज समग्र रूप से आलोचना का विषय बना। "उन्होंने हरिश्चंद्र चंद्रिका' में सभी विषयों पर लेख प्रकाशित कर पाठकों की रुचि और ज्ञान को विस्तृत किया । उसमें कविता, नाटक, कहानी आदि के अतिरिक्त विज्ञान, इतिहास, पुरातत्व, जीवनी, यात्रा आदि विषयों पर भी लेख निकाले"। इसी तरह उनके लेख राजनीतिक विषयों पर भी होते थे जैसे–'अंग्रेजों से हिंदुस्तानियों का मन क्यों नहीं मिलता'। भारतेंदु की कुछ रचनाएँ उनकी राजभक्ति को भी प्रदर्शित करतीं हैं जैसे– अलवरत वर्णन अन्तर्लापिका, श्री राजकुमार सुस्वागत–पत्र, मुँह दिखावनी, मानसोपायन, रिपनाष्टक आदि। फिर भी कई बार ब्रिटिश राज के प्रति उनकी टिप्पणी सख्त हो उठती थी द्य साफ है कि भारतेंदु के ब्रिटिश राज की आर्थिक व्यवस्था के प्रति विचार बदल रहे थे द्य एक ओर वे रानी के लिए 'पूरी अमी की विक्टोरिया सी, चिर जिओ सदा विक्टोरिया रानी' कह रहे थे तो दूसरी ओर 'अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी, पै धन विदेस चलि जात, इहै अति ख्वारी' लिख रहे थे। वे आम जनता को अंग्रेजी राज के विषय में जागरूक करने के उद्देश्य से 'भारत दुर्दशा' नाटक और 'अंधेर नगरी' प्रहसन आदि रचनाओं द्वारा उनकी छिपी हुई लूट नीति को सामने ला रहे थे। वे सचेत करते हुए कहते हैं–

'रोवहु सब मिलिकै आवहु भारत भाई
हा–हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई'।

स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग पर बल देना और अंग्रेजों को धन, बल आदि का हरण करके रुलाने वाला कह कर पत्र प्रकाशित करना, उनके दूरगामी एवं साहसिक दृष्टिकोण का ही परिचायक है। वे अंग्रेजों से ही नहीं अंग्रेजी भाषा और विचार से भी चिंतित थे ।

'सब गुरुजन को बुरो बतावै, अपनी खिचड़ी अलग पकावै,
भीतर तत्त्व न झूठी तेज़ी, क्यों सखि साजन नहिं अंग्रेजी'।

उनका व्यक्तित्व विरुद्धों के संघर्ष से निर्मित हुआ था – "वे विशिष्ट भी थे, सामान्य भी; राजभक्त भी थे, देशभक्त भी; सनातनी वैष्णव भी थे, आडंबर विरोधी भी; परंपरावादी भी थे, आधुनिक भी; कविता में ब्रजी के प्रयोक्ता थे, गद्य में खड़ी बोली के; गृहस्थ भी थे और गृहस्थी के बाहर स्त्री–सौंदर्य के प्रेमी भी"। इन विरोधी तत्वों का ही प्रभाव था कि भारतेंदु अपनी विभिन्न रचनाओं में, फिर वे गद्य हो या पद्य अंग्रेजी राज की औपनिवेशिक अर्थनीति के छिपे हुए लाभ के तत्व को जनता के सामने लाते रहे द्य इस राजनैतिक लेखन का कारण लोक जीवन में मौजूद पहले से ही उभर कर चली आ रही स्वाधीन चेतना में देखा जा सकता है द्य लगभग 1871 से ही दादा भाई नैरोज़ी ने अंग्रेजी राज में वित्त संबंधी समस्याओं को प्रस्तुत करना शुरू कर दिया था। उनके अनेक भाषण एवं लेख इस ओर इशारा करते हैं।

भारतेंदु मण्डल के ही कवि राधाचरण गोस्वामी अपनी कविता 'भारत दुर्दशा' में भारत की अवस्था सुधारने के लिए निवेदन करते हैं। उनकी एक अन्य कविता की पंक्ति "हमारो उत्तम भारत देस' भी प्रसिद्ध हुई और भारतेंदु से प्रभावित होकर उन्होंने देशभक्ति और समाज सुधार हेतु 'भारतेंदु' पत्र वृन्दावन से निकाला।

मैं हाय–हाय दे ध्याय पुकारी रोई,
भारत की डूबी नाव उबारो कोई। (राधाचरण गोस्वामी)

भारतेंदु युग में ही राष्ट्रीय चेतना का स्त्री–स्वर राजरानी देवी के लेखन से प्रकट हुआ द्य उन्होंने नेतृत्व करने वाली स्त्री के रूप में अपनी लेखनी को आकार दिया–

'देवियों क्या पतन अपना देख कर, नेत्र से आँसू निकलते हैं नहीं?

भाग्यहीना स्वयं को क्या देख कर, पाप से कुलषित हृदय जलते नहीं?
क्या कुछ देश का अभिमान है, खो गयी सुखमय सभी स्वाधीनता
हो रहा कितना अधिक अपमान है?
समुद इसको कौन सकता है बता'।

श्रीधर पाठक की देश–प्रेम से संबंधित रचनाएँ 'भारत गीत' (1928) में संकलित हैं। अपनी 'हिंदी वंदना' नामक रचना में उन्होंने भारत की प्रकृति के माध्यम से स्वतंत्रता की घोषणा की है– 'जय जयति सदा स्वाधीन हिंद, जय जयति–जयति प्राचीन हिन्द'। वे स्पष्ट रूप से भारत भूमि के प्रति आश्वस्त हैं–

'जहाँ न संभव अघ का लेश
संभव केवल पुण्य प्रवेश
जय–जय प्यारा भारत –देश'

द्विवेदी युग में राष्ट्र कवि मैथलीशरण गुप्त ने अपने लेखन से राष्ट्रीयता की भावना को व्यक्त करते हुए देश के अखंड रूप पर बल दिया द्य आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की प्रेरणा से गुप्त जी ने ब्रजभाषा में कविता लिखना छोड़ कर खड़ीबोली में लिखना आरम्भ किया। उनके लेखन में देश के प्रति एक गहरा दायित्व बोध दिखाई देता है। उन्होंने 1912 में ही 'भारत भारती' और अन्य राष्ट्रीय रचनाएँ लिखना आरंभ कर दिया था। उन्होंने तत्कालीन आन्दोलनों को अपनी रचनाओं का विषय बना अपनी राष्ट्रीय भावनाओं को स्वर प्रदान किया। उनके लेखन में राष्ट्रीय स्वर और अतीत गौरव इतना मुखर था कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने उन्हें 'राष्ट्रकवि' की उपाधि दी थी। रामस्वरूप चतुर्वेदी अपने इतिहासग्रंथ में लिखते हैं– "गांधी जैसे राष्ट्रपिता हैं, वैसे ही सहज भाव से मैथलीशरण गुप्त राष्ट्र–कवि हैं। ये उपाधियाँ किसी व्यक्ति या समूह द्वारा प्रदत्त नहीं मानों पूरे राष्ट्र के द्वारा दी हुईं हैं"। 1910 में गुप्त जी की रचना 'जयद्रथ वध' आती है जो पौराणिक प्रसंग को जातीय गौरव के भाव में प्रस्तुत करती है। जयद्रथ वध को बंगभंग के वातावरण के साथ पढ़ा गया लेकिन गुप्त जी को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान 'भारत भारती' से मिली द्य द्विवेदी जी ने इस रचना के विषय में कहा भी है कि यह सोते हुए को जगानेवाला है, भूले हुओं को ठीक राह पर लाने वाला है, यह स्वदेश पर प्रेम उत्पन्न कर सकता है, इसमें यह संजीवनी शक्ति है। जिस प्रकार भारतेंदु के नाटक 'भारत दुर्दशा' में भारतीय जनमानस का आत्म मूल्यांकन है उसी प्रकार 'भारत भारती' में गुप्त जी के जन–जागरण का स्वर उस आत्म मूल्यांकन की वेदना का प्रसार ही है–

"हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी
आओ, विचारें आज मिल कर ये समस्याएं सभी"।

देश के प्रति सच्ची निष्ठा और आत्मविश्वास उनके लेखन में दिखाई देता है। 'गुरुकुल' कविता में वे आत्मसमर्पण के भाव को

भारत के आने वाले स्वर्णिम भविष्य के संकेत के रूप में देखते हैं और कह उठते हैं–

"जिस कुल जाति देश के बच्चे दे सकते हैं यो बलिदान
उसका वर्तमान कुछ भी हो, पर भविष्य है महा महान"

वे केवल साहित्य के माध्यम से ही आन्दोलन से जुड़े ही नहीं थे बल्कि स्वयं सक्रिय थे। राजनीतिक सक्रियता के कारण 1942 में वे जेल भी गए। उनकी एक लोकप्रिय कविता 'मातृभूमि' भी है जिसमें वे वैष्णव भावुकता के साथ स्वदेशानुराग की प्रतिमा को व्यक्त करते हैं–

'हे मातृभूमि ! तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की'।

भारत भारती कविता में प्रकृति प्रेम से देश प्रेम को जोड़ने का भाव उन्होंने प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया। रामचंद्र शुक्ल ने इस विशेषता की विस्तृत प्रशंसा की है। गुप्त जी ने प्रकृति के उस रूप को भी प्रस्तुत किया जहाँ आकाल ने सभी ओर भारतीय किसानों की कमर तोड़ दी थी। आज कितने ही अध्ययनों ने सिद्ध किया है कि अंग्रेजों की शोषणकारी नीतियों के कारण इस अकालों ने विकराल रूप धर लिया था–

'दुर्भिक्ष मानो देह धर कर घूमता सब ओर है,
हा अन्न, हा हा अन्न का रव गूंजता सब ओर है'।

अयोध्यासिंह उपाध्याय ने भी 'प्रियप्रवास' में कृष्ण के चरित्र के माध्यम से देशभक्ति और समाज हित में मथुरा जाने को प्रस्तुत किया। मैथलीशरण गुप्त के छोटे भाई सियारामशरण गुप्त अपने ढंग के अकेले चिंतनशील कवि हैं जिनके लेखन में चिंतन प्रधानता और संकेतात्मकता प्रबल बनी रही और उन पर गांधी दर्शन का प्रभाव अंत तक बना रहा। उन्होंने हिंसा का एक मात्र उत्तर अहिंसा को माना। 'जय हिंद' में स्वदेश का अभिनंदन कुछ इस प्रकार आता है –

'जय जय भारतवर्ष हमारे, जय जय हिंद, हमारे हिन्द
विश्व–सरोवर के सौरभमय प्रिय अरविंद, हमारे हिन्द'।

रामनरेश त्रिपाठी को भी असहयोग आंदोलन में भाग लेने के कारण 1 वर्ष से अधिक कारावास की सजा सुनाई गई थी। उनके तीन काव्य ग्रंथ मिलन, पथिक और स्वप्न में राष्ट्रीय चेतना को अलग–अलग कथाक्रम में दर्शाया गया है। मिलन में यदि विदेशी शासक की क्रूरता के प्रति रोष है तो पथिक में कर्मशील युवा नायक राजा और प्रजा को असहयोग के लिए मनाने का जतन करता है और वहीं स्वप्न में मातृभूमि पर विदेशी आक्रमण की कहानी कही गयी है। उनकी तीनों रचनाएँ राष्ट्रीय भावधारा से प्रभावित स्वाधीन चेतना के सच्चे ग्रंथ हैं। गांधी दर्शन का प्रभाव होने के कारण उनके लेखन में आत्म–त्याग और बलिदान का वर्णन बार–बार आता है। पराधीन देश के नवयुवकों को जागृत करने के संदेश से ओतप्रोत ये रचनाएँ नवजीवन का सार प्रस्तुत करती हैं।

निष्कर्ष

इस तरह हिंदी कविता के विकास में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि भारतेंदु युग से ही देशप्रेम, अतीत गौरव और समाज सुधार जैसे विषय प्रमुख विषय बन कर उभरते हैं। भारतेंदु युग में यद्यपि राजभक्ति बनाम राष्ट्र भक्ति का संशय उपस्थित है लेकिन रचनाओं और विद्वानों के विचारों में तेज़ी से परिवर्तन नज़र आता है। विशेष रूप से कांग्रेस की स्थापना के बाद जब संस्थापित रूप से भारत और भारतवासियों को केंद्र में रख कर अध्ययन आरम्भ होता है तो तस्वीर और भी साफ़ हो जाती है। यही कारण है कि द्विवेदी युग के साथ ही स्वाधीनता की भावना तेज़ी से प्रसारित होने लगती है और स्वातंत्र्य चेतना से सराबोर साहित्य में भी तेज़ी आती है। गाँधी जी के भारत आगमन के पश्चात् आम आदमी भी आन्दोलन को सफल बनाने में उतर जाता है और छायावाद तक आते – आते यह भाव और भी प्रभावी रूप से कविता का विषय बन जाता है। साहित्य अपने रचनाकाल की हर साँस और उसके उद्देश्य से जुड़ जाता है। स्वतंत्रता संघर्ष के 190 वर्षों की आरंभिक अवधि में भले ही हिंदी साहित्य का इस ओर कदम न उठ पाया हो लेकिन आगामी 100 वर्षों में उसने पुरजोर तरीके से अपने भीतर की समस्त शक्ति के साथ स्वाधीनता के विचार को प्रस्तुत किया।

संदर्भ सूची

1. (अजय तिवारी, राष्ट्रीय आन्दोलन और साहित्य) नया ज्ञानोदय, अक्तूबर–2008, पृष्ठ–74–75
2. श्रीनारायण चतुर्वेदी, आधुनिक हिंदी साहित्य का आदिकाल, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली (1993) पृष्ठ–26–27
3. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (2004) पृष्ठ–80–81
4. श्रीनारायण चतुर्वेदी, आधुनिक हिंदी साहित्य का आदिकाल, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली (1993), पृष्ठ–87
5. लक्ष्मीसागर वाष्णेय, भारतेंदु हरिश्चंद्र, साहित्य भवन, इलाहबाद (1965) पृष्ठ–183
6. ब्रजरत्नदास (संपा), भारतेंदु ग्रंथावली (भाग–2), नागरी प्रचारिणी सभा, काशी (सं1991) पृष्ठ–810
7. बच्चन सिंह, साहित्यिक निबंध आधुनिक दृष्टिकोण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2008) पृष्ठ–130–131
8. (सुमन राजे, राष्ट्रीय आन्दोलन और महिला–लेखन) नया ज्ञानोदय, अप्रैल–2008, पृष्ठ–23
9. डॉ. रामचंद्र मिश्र, श्रीधर पाठक तथा हिंदी का पूर्व स्वछंदतावादी काव्य, रणजीत प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स, दिल्ली (1959)पृष्ठ–313–314
10. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (2004) पृष्ठ–97
11. मैथलीशरण गुप्त, साहित्य सदन, झाँसी (सं. 1984) पृष्ठ–4
12. चन्द्र त्रिखा (संपा) प्रतिनिधि आधुनिक कवि, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकुला (2003) पृष्ठ–17
13. रेवती रमण, मैथलीशरण गुप्तरू भारतीय साहित्य के निर्माता, साहित्य अकादमी, दिल्ली (2016) पृष्ठ–48
14. वहीं, पृष्ठ–57
15. वेबसाइट– हिन्दवी, सियाराम शरण गुप्त